# इकाई 11 : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

**इकाई की रूपरेखा**


11.0 उद्‌देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 युग परिवेश
11.3 कवि परिचय
    11.3.1 जीवन परिचय
    11.3.2 कवि व्यक्तित्व
    11.3.3 रचनाएँ
11.4 काव्य संवेदना
    11.4.1 अनुभूति पक्ष की सामाजिकता
    11.4.2 ग्रामीण संवेदना
    11.4.3 आधुनिक भाव–बोध
    11.4.4 सत्ता का विरोध और क्रांतिकारी आवाज
    11.4.5 परम्परा और प्रयोग
    11.4.6 विचारधारा और प्रभाव
    11.4.7 व्यंग्य वक्रोक्ति को ओर रुझान
    11.4.8 प्रकृति और जीवन दृष्टि
11.5 अभिव्यंजना शिल्प
    11.5.1 काव्य रूप
    11.5.2 काव्य–भाषा
    11.5.3 बिंब और प्रतीक
    11.5.4 नवीन उपमान योजना
    11.5.5 छंद और लय
11.6 सारांश
11.7 शब्दावली
11.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर
11.9 उपयोगी पुस्तकें


## 11.0 उद्‌देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे;
- उनके युग–परिवेश की जानकारी दे सकेंगी/सकेंगे;

- सर्वेश्वर की कविता की संवेदना यानी उनकी कविता के कथ्य, अनुभूति की सामाजिकता, विचारधारा का उन पर आए प्रभावों की चर्चा कर सकेंगी/ सकेंगे;
- उनके द्वारा परंपरा को स्वीकृति और उसमें किए गए प्रयोगों का विश्लेषण कर सकेंगी/ सकेंगे;
- सर्वेश्वर की कविता के क्रांतिकारी स्वर और व्यंग्यात्मकता को पहचान सकेंगी/सकेंग;,
- उनकी काव्य–भाषा और बिंब–विधान की चर्चा कर सकेंगी/सकेंगे;
- सर्वेश्वर की उपमान योजना और छंदों के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे और
- हिन्दी कविता को उनके योगदान का उल्लेख कर सकेंगी/सकेंगे।

## 11.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाइयों में आप प्रयोगवाद और नयी कविता के स्वरूप और विकास के बारे में पढ़ चुके हैं। इस तरह आप पाँचवे दशक और उसके बाद की हिंदी कविता के कथ्य, शिल्प और संवेदना में आए बदलाव से भली भांति परिचित हो चुके हैं। नयी कविता के दो प्रमुख कवियों – अज्ञेय और मुक्तिबोध के बारे में भी आपने पिछली दो इकाइयों में अध्ययन किया है। हिंदी कविता के बदलते हुए मुहावरे और सामाजिक सरोकारों के बारे में आप जान गए हैं। इस इकाई में आप नयी कविता के एक अन्य महत्त्वपूर्ण कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और उनकी कविता के बारे में पढ़ेगे। सर्वेश्वरदयाल जी ने कविता लिखना सन् 1950–51 के आस–पास शुरू किया था। पिछली इकाइयों में आपने अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक', 'दूसरा सप्तक' तथा 'तीसरा सप्तक' के बारे में पढ़ा है। आप जानते हैं कि इन तीन काव्य–संग्रहों का प्रकाशन हिंदी कविता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण घटनाएं रहीं हैं। ये तीनों संग्रह नए काव्यांदोलनों को लेकर आए। सर्वेश्वर जी तीसरे सप्तक के कवि हैं यद्यपि उन्होंने कविता लेखन काफी पहले ही शुरू कर दिया था।

## 11.2 युग परिवेश

स्वाधीनता प्राप्ति से पहले का साहित्य राष्ट्रीय–सांस्कृतिक जागरण की चेतना का साहित्य है। मुक्ति की आकांक्षा इसका बाल स्वर है। यह मुक्ति रचनाकार जीवन के सभी क्षेत्रों में चाहता है। राजनीतिक गुलामी की समाप्ति के साथ–साथ वह मनुष्य को सामाजिक–नैतिक–आर्थिक–सांस्कृतिक हर स्तर पर उन बंधनों से मुक्त कराना चाहता है जो मनुष्य की प्रगति के मार्ग की बाधा थे। भारतेन्दु युग से लेकर द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तक के साहित्य में यह आकांक्षा अपने–अपने ढंग से व्यक्त हुई है। एक तरफ विदेशी साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के शोषण के खिलाफ आवाज दिखाई देती है तो दूसरी तरफ सामाजिक कुरीतियों और गैर बराबरी के प्रति। कहीं नारी जागरण का स्वर दिखाई देता है तो कहीं हरिजन उद्धार और किसान–मजदूरों के उन्नयन की इच्छा का। कविता के विषय और शिल्प–संरचना में भी तेजी से नए–नए बदलाव सामने आते हैं।

राष्ट्रव्यापी स्वाधीनता आंदोलन ने जन–मानस में विभिन्न प्रकार के स्वप्नों की सृष्टि की थी। हम सोच रहे थे कि आजादी के बाद ऐसे राष्ट्र का निर्माण हो सकेगा जो मानवतावादी मूल्यों की

सर्वोपरि स्थापना करता हुआ 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' समाज की सृष्टि कर सकेगा। गाँधी, तिलक, सुभाष, भगतसिंह आदि के आदर्शों पर निर्मित समाज की कल्पना हमें पूरी होती दिखाई दे रही थी। किन्तु आजादी के बाद का यथार्थ इन आदर्शों के विपरीत साबित हुआ। आजादी का सवेरा देश के बंटवारे और सांप्रदायिक दंगों के भीषण रक्तपात और वैमनस्य में हुआ। अलगाववादी ताकतें प्रबल होती दिखाई दीं। संकट के बादलों से घिरे भविष्य की ओर संकेत करते हुए कवि ने लिखा –

ऊँची हुई मशाल हमारी आगे कठिन डगर है
शत्रु हट गया लेकिन उसकी छायाओं का डर है
आज प्रलय की रात पहरुए सावधान रहना।

**– गिरिजाकुमार माथुर**

जिन छायाओं का डर था वे प्रत्यक्ष मंडराती हुई सामने आयीं और हमें भाषा, जाति, धर्म, प्रांतीयता आदि के नाम पर बढ़ती हुई सांप्रदायिकता का सामना करना पड़ा।

आजादी के सपनों से हमारा मोहभंग हुआ। हमने महसूस किया कि हमें केवल राजनीतिक आजादी मिली है। आर्थिक शोषण से हम मुक्त नहीं हुए हैं। देश का औद्योगीकरण तो हुआ किन्तु न तो किसान–मजदूर की हालत में सुधार होता दिखाई दिया और न ही निम्न मध्यवर्ग का शोषण रुका। गोरे साहबों के चले जाने पर जो देशी साहब कुर्सी पर आए वे भी अन्याय और लूट में अंग्रेजी साहबों से पीछे नहीं थे। गाँधी की हत्या केवल एक घटना मात्र नहीं रही। उसके साथ जीवन मूल्यों की भी हत्या होती दिखाई दी। राष्ट्रीय विकास कार्यों, पंचवर्षीय योजनाओं, सुधार कार्यक्रमों के बावजूद आम आदमी पर अभावों–पीड़ाओं का बोझ कम न हुआ। भ्रष्टाचार और पूँजीवाद का प्रसार होता दिखाई दिया। राष्ट्रीयता के नाम की दुहाई देने वालों के चेहरों के पीछे का जो असली चेहरा सामने आया उसने हमारे जीवन में कुंठा और घुटन की सृष्टि की। मोहभंग से पैदा इस संत्रास और पीड़ा ने साहित्यकार को संघर्ष की ओर अग्रसर किया। कवि ने अपने सामाजिक दायित्व को पहचाना और यथार्थ जीवन के संघर्षों से जूझने के लिए कलम उठाई।

दूसरी ओर देश में औद्योगीकरण के साथ ही शहरीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई जिसके साथ समाज में मध्यवर्ग का उदय हुआ। बात यह नहीं कि मध्यवर्ग पहले था ही नहीं। लेकिन अब इसमें एक निश्चित तरह का बदलाव था। पुरानी समाज व्यवस्था मूलतः कृषि–व्यवस्था और हस्तशिल्प पर केन्द्रित थी। आजादी से पहले अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिए जो थोड़े बहुत उद्योग यहाँ स्थापित किए थे या सरकारी नौकरियों पर नियुक्तियाँ की थीं उनके कारण ही गाँवों से लोग शहरों की तरफ मुड़े थे। लेकिन आजादी के बाद स्वतंत्र रूप से स्थापित उद्योगों तथा उद्योग नगरों में बड़ी मात्रा में मजदूर वर्ग गाँवों से शहरों में आया। पुराने शहरों का विस्तार हुआ और नए शहर, कस्बे तथा उद्योग–नगर बसने लगे। परिणामस्वरूप कृषि से इतर वर्ग भी रोजगार की तलाश में शहरों की ओर चल पड़ा। इस तरह बदलते हुए उत्पादन संबंधों ने समाज व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन उत्पन्न किए महानगरों का विकास हुआ।

इस बदलती हुई सामाजिक व्यवस्था ने एक जागरूक मध्यवर्ग को जन्म दिया जो अपने साधनों की सीमाओं को जानता था और उन सीमाओं के कारणों के प्रति भी सचेत था। यही वह वर्ग था जो ऊपर तथा नीचे के वर्ग को जोड़ता था, किन्तु अपनी व्यथा के भीतर संत्रस्त था। इस मध्यवर्ग की घुटन, कुंठा और आक्रोश की अभिव्यक्ति भी इस युग के साहित्य में हुई है। इस आक्रोश और घुटन का एक आयाम श्रम का परायापन, आत्मनिर्वासन, अवमानवीकरण और अकेलापन (Alicnation) था। गाँव उससे छूट तो गया था, किंतु उसकी चेतना में जीवित था। वह गाँव और शहर के बीच की आर्थिक दूरी के प्रति भी जागरूक था। विकास के नाम पर किए जा रहे प्रयासों और उनसे प्राप्त होने वाले लाभ में किसान–मजदूरों के अल्पांश की हिस्सेदारी को भी देख रहा था। कहना चाहिए कि असलियत से वह काफी वाकिफ था और उसे बेनकाब कर उसके खिलाफ संघर्ष के लिए उत्सुक नयी कविता का सृजन इसी मनोभूमिका में हुआ है।

## 11.3 कवि परिचय

### 11.3.1 जीवन–परिचय

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जन्म 15 सितंबर 1927 को बस्ती उत्तर प्रदेश में हुआ था। आरंभिक शिक्षा बस्ती में तथा उच्च शिक्षा क्वींस कालेज वाराणसी और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हुई। सन् 1949 में उन्होंने हिंदी में एम. ए. किया। आरंभ में कुछ समय स्कूल में शिक्षक रहे। फिर सरकारी कार्यालय में नौकरी की। थोड़े दिन के लिए आकाशवाणी के दिल्ली तथा अन्य केन्द्रों में कार्य किया। सन 1969 से 1982 तक हिंदी साप्ताहिक 'दिनमान' में काम किया। उसके बाद बाल पत्रिका 'पराग' के संपादक बने। किन्तु पराग की सेवा बहुत थोड़े ही दिन कर पाए। 23 सितंबर 1983 को 56 वर्ष की अल्पायु में उनका देहांत हो गया।

### 11.3.2 कवि व्यक्तित्व

सर्वेश्वर के कवि व्यक्तित्व की बनावट में दो तत्वों ने महत्वपर्ण भूमिका निभाई–भारतीय ग्राम्य जीवन की संवेदना और समाजवादी विचारधारा। उनका बचपन गाँव के जिस हरे–भरे उन्मुक्त वातावरण में बीता था उसने उनकी सृजन चेतना को इतने गहरे तक प्रभावित किया कि महानगर उनको हमेशा पराया ही लगता रहा वस्तुतः कोई मोह न होकर भारतीय जन–जीवन से जुड़ाव है। उनकी कविता जिस मामूली आदमी की पीड़ा को प्रस्तुत करती है उसकी संवेदना का निर्माण इन्हीं ग्राम्य संस्कारों से हुआ है। इसीलिए वे खेतिहर मजदूरों, किसानों, चरवाहों, ग्रामीण बच्चों, खेत की मेड़ों, मैदानों, नदियों और पोखरों के चित्र उनकी रचनाओं में यत्र–तत्र मिलते हैं। लोहियावादी समाजवादी विचारों के संस्कार उन्हें विद्यार्थी जीवन में मिले। उनका परिचय समाजवादी कवि समीक्षक विजयदेव नारायण साही से हुआ। तभी वे प्रयाग की साहित्यक संस्था 'परिमल' के संपर्क में आए। समाजवादी विचारधारा का प्रभाव उनके जीवन तथा लेखन पर अंत तक रहा। कुछ समय तक वे 'परिमल' के कार्यवाहक सचिव भी रहे।

### 11.3.3 रचनाएँ

सर्वेश्वर जी कवि, कथाकार, नाटककार, साहित्य चिन्तक, संस्मरणकार, पत्रकार तथा कला समीक्षक थे। उनका पहली रचना सन् 1944 में 'माधुरी' में छपी थी। उसके बाद कभी–कभार कहानियाँ लिखते रहे और विद्यार्थी जीवन में ही कहानीकार के रूप में अपनी पहचान बना ली।

उनका प्रथम काव्य संग्रह 'काठ की घंटियाँ' सन् 1959 में छपा। इसमें सन् 1949 से 1957 तक की कविताएँ संकलित हैं। इसी वर्ष अज्ञेय जी के संपादकत्व में छपे 'तीसरा सप्तक' में भी सर्वेश्वर की कविताएँ छपी। काव्य लेखन में सक्रियता सन् 1951 से आई। इन्हीं दिनों वे 'परिमल गोष्ठी' में तेजी से चर्चित हुए और उनकी कविताओं में नयी कविता की पर्याप्त संभावनाएं दिखायी दी। इसके बाद उनके अगले काव्य संग्रह क्रमशः इस प्रकार छपे – 'बाँस का पुल' (1963), 'एक सूनी नाव' (1966), 'गर्म हवाएँ'(1969), 'कुआनो नदी' (1973), 'जंगल का दर्द' (1976), 'खूटियों पर टँगे लोग' (1982)। उनके नाटकों में 'बकरी' (1974), 'लड़ाई' (1979), 'अब गरीबी हटाओ' (1981), 'रूपमती बाज बहादुर' तथा 'होरी धूम मचा री' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उपन्यासों में 'पागल कुत्तों का मसीहा', 'सोया हुआ पल', 'सड़क' आदि उल्लेखनीय हैं। सर्वेश्वर जी ने बच्चों के लिए कई पुस्तकें लिखीं। उनके बाल साहित्य में 'बतूता का जूता', 'मँहगू की टाई', 'भौ–भौं खो–खों' तथा 'लाख की नाक' प्रमुख हैं। पत्रकार के रूप में उनकी खास पहचान 'दिनमान' साप्ताहिक के 'चरचे और चरखे' नामक व्यंग्य कालम के लिए तथा विविध पत्र–पत्रिकाओं में साहित्य रंगमंच, नृत्य और संस्कति पर समीक्षात्मक लेखन के लिए है।

उनके कविता संग्रह 'खूँटियों पर टंगे लोग' को सन् 1983 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

**बोध प्रश्न –1**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर अधिक से अधिक चार–पाँच शब्दों में दें।

1. सर्वेश्वर कौन से सप्तक के कवि हैं ?

   .....
   .....
   .....
   .....

2. सर्वेश्वर के पहले काव्य संकलन का नाम क्या है?

   .....
   .....
   .....
   .....

3. सर्वेश्वर ने कविता के अलावा और किस क्षेत्र में लेखन किया?

   .....
   .....
   .....
   .....

4. सर्वेश्वर को कौन–सी कृति पर साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला?

   .....
   .....
   .....
   .....

**अभ्यास**

1. सर्वेश्वर के काव्य लेखन के समय के युग परिवेश की विशेषताएँ लगभग 10 पंक्तियों में बताइए।

.....

.....

.....

.....

## 11.4 काव्य संवेदना

### 11.4.1 अनुभूति पक्ष की सामाजिकता

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना नयी कविता की प्रगतिशील धारा के कवि हैं। आजादी के बाद हिंदी साहित्य में शब्द को कर्म की अर्थवत्ता से जोड़ने के लिए रचनाकार ने जो दायित्व अपने ऊपर लिया और जिसे पूरा करने के लिए वह निरंतर संघर्षरत रहा, सर्वेश्वर उसी संघर्ष के प्रति प्रतिबद्ध रचनाकार हैं। अपनी कविता में उन्होंने अपने समय और समाज की समस्याओं, चिंताओं, मनोदशाओं, विसंगतियों और विद्रूपताओं, आत्म–निर्वासन और पराएपन को वाणी दी। वे अकेले में बैठ अपनी व्यक्तिगत समस्याओं से जूझने या उन्हें मुखर करने वाले कवि नहीं हैं। सम सामयिक जीवन–संदर्भों और समस्याओं से सीधे जुड़ने के कारण उनकी संवेदनात्मक क्षमता ने उनकी कविता को निरंतर नवीन विचारों और दृष्टियों से संपन्न बनाया है। उनके काव्य संकलन उनकी इस विकास यात्रा के परिचायक हैं।

नयी कविता ने जीवन के यथार्थ संघर्षों को पहचानते हुए राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में सांस्कृतिक विघटन के कारण विघटित मूल्यों के विरुद्ध समाज लड़ा है। यह समर सर्वेश्वर ने संवेदना, विषयवस्तु और काव्य–भाषा तीनों के स्तर पर जम कर लड़ा। वे मानते थे कि जरूरी नहीं कि कविता ऐतिहासिक–पौराणिक विषयों पर ही लिखा जाए – वह किसी भी विषय पर लिखी जा सकती है। कवि की दृष्टि इतनी व्यापक होनी चाहिए कि वह विषय को उस कोण से देख सके जहाँ से वह संवेदना को छूता हो। अपनी इस दृष्टि के कारण ही सर्वेश्वर की कविता के केन्द्र में विशिष्ट व्यक्ति न होकर आम आदमी रहा है। मामूली आदमी की पीड़ा के चित्र उनकी कविता में बहुत मिलते हैं –

जिन्दगी को अर्थ देने के चक्कर में
वह व्यर्थ हो गया है
मंदिरों में झाड़ू लगाते
और कीर्तन सभाओं की दरियाँ बिछाते–बिछाते
वह किसी भी काम के लिए असमर्थ हो गया है।

**– 'गर्म हवाएँ'**

मौजूदा समाज की व्यवस्था में शोषित व्यक्ति का यह चित्र मानवीय अनुभूति की गहराई को छूने के साथ ही साथ वर्गों में बँटे समाज की व्यथा को मुखर करता है। इसी तरह का एक और चित्र है जो सामाजिक शोषण और अन्याय से पिसते हुए मनुष्य को प्रस्तुत करता है –

यह खेतिहर मजदूर भूख से मर गया
यह चौपाए के साथ बाढ़ में बह गया,
यह सरकारी बाग की रखवाली करता था
लू में टपक गया।

**– 'कुआनो नदी'**

उनकी कविता में निजी सुख–दुख के साथ समाज का विशेषरूप से उसके दलित शोषित वर्ग का सुख–दुख भी व्यक्त हुआ। आरंभिक कविताओं में व्यक्त निजी सुख–दुख का स्थान धीरे–धीरे परवर्ती कविताओं में जीवन जगत की वास्तविकताएँ लेती गई। परिवेश के साथ कवि का लगाव दृढ़तर होता गया।

### 11.4.2 ग्रामीण संवेदना

सर्वेश्वरदयाल मूलतः ग्रामीण संवेदना के रचनाकार हैं। शहरी या कस्बाई जीवन और संवेदना भी उनकी कविता में हैं किन्तु गाँव वहाँ हर क्षण मौजूद है। गाँव की पगडंडी, कच्ची सड़क, भुजैनिया का पोखरा, कीचड़ में खड़े चौपाए, पीठ पर बस्ता लिए ईंट चलाते बच्चे, कुआनो नदी, पनियल साँपों के रेंगने की आहट, काछी–किसान–मजदूर के विभिन्न चित्र वहाँ मिलते हैं। लोक जीवन के विविध रूप उनके इन ग्राम्य जीवन के चित्रों में मिलते हैं। ग्राम्य परिवेश उनकी कविता में संवेदना और भाषा दोनों के स्तर पर मौजूद रहता है। ग्रामीण शब्दावली, मुहावरों, कहावतों का प्रयोग उनकी कविता में खुलकर हुआ है। कुछ कविताएँ तो ग्राम–गीतों की तर्ज पर लिखी गई हैं जैसे – 'सावन का गीत', 'चरवाहों का युगल गान', 'चुपाई मारौ दुल्हन', 'झाड़े रौ महकुआ', 'गरीबा का गीत' आदि जैसी समर्थ कविताएँ ग्राम गीतों की तर्ज पर ही हैं। इनके माध्यम से कवि पाठक को गाँव के जीवन का करीबी अहसास कराना चाहता है। उसके जीवन के अभावों, तकलीफों और उपेक्षा का निकट से अनुभव कराना चाहता है। सर्वेश्वर की कविता में व्यक्त मामूली आदमी की पीड़ा मूलतः गाँव के जीवन से जुड़ी है।

महानगर की यंत्रणा से वे बेचैन हैं। महानगर की पीड़ा–कराह का स्वर उनमें दर्द की मरोड़ पैदा करता है। यहाँ का पराएपन का अहसास उन्हें रूलाता है। लेकिन जब शहर गाँव में घुस पड़ता दिखाई देता है तो कवि को अपना इतिहास भी छिनता दिखाई देता है और बीता हुआ अपनापन भी छूटता दिखाई देता है। जब वह कहते हैं –

सुनो! सुनो!
यहीं कहीं एक कच्ची सड़क थी
जो मेरे गाँव को जाती है।

कच्ची सड़क की जगह बनी पक्की सड़क उस तबाही का ध्यान दिलाती है जो महानगर ने आम आदमी के लिए पैदा कर दी है। यह तबाही है गैर बराबरी की, प्रतिस्पर्धा की, बेरोजगारी, और भुखमरी की, मूल्यों के विघटन की। पुराने मूल्यों को हम छोड़ चुके हैं, नए मूल्यों की स्थापना

नहीं कर पाए हैं। आधुनिकीकरण के नाम पर हुए पश्चिमीकरण ने जीवन में जो संत्रास और घुटन पैदा की है उसको गाँवों की ओर बढ़ते देख कवि के मन में पीछे छूटे हुए गाँव की 'हुड़क' उठती है। नीम की निबौलियों, आम की डालों, महुआ, इमली, जामुनों और काँसे की चूड़ियों के प्रति यह हुड़क एक तरह का व्यामोह नहीं है, वरन् इसमें ग्रामीण जन–मानस की व्यथा बोलती है और कवि महसूस करता है कि शहरीकरण की इस प्रक्रिया से इस व्यथा का उद्धार नहीं होने वाला है। वह जानता है कि जो उपभोक्ता संस्कृति पनपी है उसमें गाँव शहरों की जरूरतों को पूरा करने के साधन मात्र रह गए हैं। राष्ट्रीय विकास कार्यों से मिलने वाले लाभ का बड़ा भाग शहरों ने पाया है, गाँवों को उनका पूरा भाग नहीं मिला है। गाँवों में विकास के नाम पर जो सुविधाएँ पहुँचाई गई हैं उसका भोक्ता भी संपन्न वर्ग है। किसान–मजदूर अब भी दलित शोषित हैं। शहर द्वारा गाँव के शोषण से वह व्यथित हैं। कवि संपूर्ण संकल्प से किसानों और मजदूरों में मिल जाना चाहता है –'उनका और उनके लिए होना चाहता है'। सदियों से दलित–शोषित, अनपढ़ खेतिहर मजदूर को क्रांति के अंगारों का सामूहिक आग का मतलब समझाना चाहता है। अभावों से ठंडे उनके चूल्हों में धधकना चाहता है –

वह आग मेरे करीब आती जा रही है।
कभी मैं किसानों की चिलमों में अंगारे की तरह दमकने की कामना करता था,
मजदूरों की बीड़ियों में सुलगने के ख्वाब देखता था।

आजादी के बाद तेजी से गाँवों से शहरों की ओर प्रवास हुआ। रोजी की तलाश में आए आदमी ने अपना संघर्ष अकेले झेला। एक बार आने के बाद वह वापस न जा सका। उसकी चेतना गाँव और शहर के बीच खींचतान की बनी रही। शहरी जीवन ने उसे अपने में ऐसा लपेट लिया कि मुड़कर वापस जाना उसके लिए संभव न रहा। यह चेतना अधिकांश शहर आए जनों की है चाहे वे यहाँ आकर चार पैसे कमाकर संपन्न हो गए हों, चाहे यहाँ भी तसला ढोने और फुटपाथ पर सोने के लिए मजबूर हों।

### 11.4.3 आधुनिक भाव–बोध

सर्वेश्वर की आरंभिक कविताओं में अज्ञेय और धर्मवीर भारती की तरह रोमांटिक भावबोध की प्रधानता है किंतु धीरे–धीरे यह रोमांटिक भावबोध जीवन–जगत की विषमताओं से टकरा कर टूट जाता है। 'गर्म हवाएँ' संकलन इसी ठंडे सवेरे के खो जाने का प्रतीक है। आगे के सभी संग्रहों में 'गर्म हवाएँ' की यह ज्वलनशील चेतना बलवती होती जाती है। 'जंगल का दर्द', 'कुआनो नदी' और 'खूटियों पर टंगे लोग' में अनुभव की सामाजिक व्याप्ति और सामाजिक दायित्व लोक–संस्कृति का भाव बन जाते हैं।

नयी कविता की प्रगतिशीलधारा के प्रतिनिधि कवि सर्वेश्वर ने सामंतवादी, साम्राज्यवादी, उपनिवेशवादी, अलगाववादी शक्तियों के प्रति जनता को सावधान किया। देश में राजनीतिक और आर्थिक दोनों क्षेत्रों में सक्रिय संकट की ओर आगाह किया। आजादी के बाद का मोह–भंग उनकी पूरी काव्य–संवेदना में भीतर–बाहर व्याप्त है। स्वाधीनता संघर्ष के दौरान जो स्वप्न हमने देखे थे वे एक–एक कर मिटते दिखाई देते हैं। आदर्शों का खोखलापन वादों का ढोंग, नारों की शून्यता उन्हें प्रत्यक्ष दिखाई देती है। 'यह खिड़की' नामक कविता में वे लिखते हैं –

अब मैं यह खिड़की नहीं खोलूँगा
x x x x
यह बंद कमरा
सलामी मंच है
जहाँ मैं खड़ा हूँ –
पचास करोड़ आदमी खाली पेट
ठठरियाँ खड़ खड़ाते
हर क्षण मेरे सामने से गुजर जाते हैं
झाँकियाँ निकलती हैं
ढोंग की विश्वासघात की
बदबू आती है हर बार
एक मरी बात की
लोकतंत्र को जूते की तरह
लाठी में लटकाये
भागे जा रहे हैं सभी
सीना फुलाए।

यहाँ 'लोकतंत्र को जूते की तरह लटकाना' लोकतंत्र की निरर्थकता का बड़ा ही सजीव बिंब प्रस्तुत कर देता है। जूता यदि पैर में पहना जाए तो पैर की सुरक्षा करता है। किन्तु यदि पैरों में पहनने की बजाय इसे लाठी के ऊपर लटका दिया जाता है तो केवल अपने होने का अहसास कराता है। लोकतंत्र भी यदि केवल सिद्धांत रूप में अपना लिया जाए, उन सिद्धांतों पर अमल न किया जाए तो वह लाठी पर लटके जूतों के समान ही दिखावटी होता है। मोहभंग की स्थितियों से उत्पन्न, अवसाद और विवशता सर्वेश्वर की कविता में शुरू से दिखाई देती हैं। धीरे–धीरे यह निजी से सामान्य और सामाजिक होती जाती है। उनकी दृष्टि आत्मपरक से वस्तुपरक होती जाती है। यह बदलाव नीचे दिए गए दो उदाहरणों से स्पष्ट है। उदाहरण 'क' की निजता उदाहरण 'ख' की सामाजिकता में बदल जाती है –

(क) 'बोलना चाहता है, अपनी पग ध्वनि से बोल
दर्द की गाँठ तू अपने ही छालों पर खोल'

(ख) 'मैं जानता हूँ मेरे दोस्त
कि हमारे–तुम्हारे
और सबके आँसू
इस धरती पर गिरेंगे
और सूखते चले जाएँगे।'

कविता में व्याप्त निराशा, घुटन, आत्म–निर्वासन, पराएपन और अकेलेपन की स्थितियों के कारण कभी–कभी सर्वेश्वर पर अस्तित्ववाद का प्रभाव भी स्वीकार कर लिया जाता है। 'कुआनो नदी' का 'मुर्दाघाट का पाट' तथा कविताओं में जगह–जगह टूटन, पराजय या बस्ती के चित्रों के आधार पर या लाश, मृत्यु, सड़ाँध, केंचुओं, केकड़ों, गुबरलों आदि को प्रतीक के रूप में इस्तेमाल करने के कारण कभी–कभी उन पर अस्तित्ववाद के प्रभाव का भ्रम हो जाता है। किन्तु

जन–शक्ति में आस्था रखने के कारण सर्वेश्वर पश्चिम की अस्तित्ववादी और अनास्थावादी विचारधारा के कवि नहीं हैं। कविताओं में पस्ती–पराजय के अंकन और भदेस प्रतीकों के इस्तेमाल के बावजूद वे आस्था के कवि हैं, क्रांति और परिवर्तन में विश्वास रखते हैं। वह स्थितियों को उनके क्रूर, निर्मम यथार्थ रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं।

### 11.4.4 सत्ता का विरोध और क्रांतिकारी आवाज

उनकी कविता का मूल भाव बोध व्यवस्था के विरोध का भावबोध है जो धीरे–धीरे तल्खी में बदलता जाता है। यह राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था के विरुद्ध क्रांति की आवाज उठाता है और चेतावनी देता है –

लेकिन याद रखो
अन्याय और यातना की सीमा
जब पार हो जाती है
तो बेजान में ही सबसे पहले जान आती है।

'जंगल का दर्द' संकलन की कविताओं में वे अंधेरे के बर्फीले माहौल को विचारों की आग की रोशनी से चीरने के लिए आश्वस्त दिखाई देते हैं। यह आग आपातकाल के अंधेरे में काले तेंदुए को खदेड़ने के लिए लगाई गई है –

इतिहास के जंगल में
हर बार भेड़िया मॉद से निकाला जाएगा
आदमी साहस से एक होकर
मशाल लिए खड़ा होगा।

यहाँ वे निराला और माखनलाल चतुर्वेदी के क्रांतिकारी स्वर के बहुत निकट दिखाई देते हैं। धीरे–धीरे विद्रोह और बगावत का स्वर उनकी कविता का मूल स्वर बनता जाता है। अन्याय और शोषण की काली चट्टान पर बैठे सत्ता के काले तेंदुए को भारतीय जनता पहचानती है और कवि उसे प्रेरित करता है कि खुंखार तेंदुए से डरने की बजाए उसको खदेड़ने का प्रयास करो –

तेंदुआ गुर्राता है
तुम मशाल जलाओ
क्योंकि तेंदुआ गुर्रा तो सकता है
मशाल नहीं जला सकता।

कवि जन सामान्य को उसकी शक्ति का अहसास कराता है कि क्योंकि उसे आम आदमी की ताकत का बड़ा भरोसा है। वे जानते हैं कि आम आदमी की यह लड़ाई जारी रहेगी भले ही इसे शुरू करने वाला इसके परिणाम को न देख पाए। कवि सामान्य मनुष्य के साथ अपने को एकाकार कर देता है और उसकी अभिव्यक्ति की अनुभूति की प्रामाणिकता को स्वतः सिद्ध करती है। आम आदमी की व्यथा को व्यक्त करते हुए कहीं भी भाव का आरोप नहीं दिखाई देता, सहे हुए, झेले हुए अनुभव की अभिव्यक्ति करता है –

हल की तरह
कुदाल की तरह
या खुरपी की तरह
पकड़ भी लूँ कलम को
तो भी फसल काटने को
मिलेगी नहीं हमको
हम तो जमीन ही तैयार कर पाएँगे
क्रांति बीज बोने कुछ बिरले ही आएँगे
हरा–भरा वे ही करेंगे मेरे श्रम को
सिलसिला मिलेगा आगे मेरे क्रम को।

आगे आने वाली पीढ़ी के लिए क्रांति की जमीन तैयार करने का विश्वास और उनमें अपने श्रम और क्रम को सिलसिला मिलने का अहसास यह सिद्ध कर देता है कि सर्वेश्वर 'आस्था' के कवि हैं। जब वे कहते हैं कि 'नहीं–नहीं प्रभो/तुमसे शक्ति नहीं माँगूंगा' तो वहाँ जो मूल स्वर है वह अनास्था का न होकर आत्मविश्वास का है। अपने भीतर की शक्ति को पहचानने का प्रयास वहाँ स्पष्ट दिखाई देता है –

हर क्षण यह जान सकूँ क्या मुझको खोना है
कितना सुख पाना है, कितना दुख रोना है
अपने सुख–दुख की प्रभु
इतनी पहचान रहे

अन्याय और शोषण किसी भी स्तर का हो वे उसके विरुद्ध आवाज अवश्य उठाते हैं। यही कारण है कि 'कुआनो नदी' में वे महानगरों द्वारा गाँवों के शोषण के खिलाफ आवाज उठाते हैं और कुआनो नदी एक साधारण नदी न रहकर व्यापक अर्थ संकेत देने वाला प्रतीक बन जाती है। जन–क्रांति की शक्ति का विश्वास उभरता दिखाई देता है।

### 11.4.5 परम्परा और प्रयोग

इस इकाई के पिछले भागों में आप पढ़ चुके हैं कि सर्वेश्वर की कविता में भारतीय जीवन और समाज के यथार्थपरक सरोकार और ग्रामीण संवेदना की प्रधानता है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उनका कवि भारतीय काव्य और हिंदी कवियों की परंपरा से जुड़ा है। प्रश्न यह है कि वे किन कवियों की परंपरा को अपनाते हैं तथा कहाँ तक अपनाते हैं।

आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने साम्राज्यवादी शोषण के विरुद्ध बगावत की जो चिनगारी अपनी रचनाओं में उठाई वह आगे के रचनाकारों में दिए की लौ के रूप में जगी। जन–सामान्य की गरीबी, दीनता और दुर्दशा की ओर समाज का ध्यान दिलाने और उसे दूर करने के लिए कवि उद्वेलित हो उठा। बालकृष्ण शर्मा, नवीन, माखन लाल चतुर्वेदी, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', गजानन माधव मुक्तिबोध, केदारनाथ अग्रवाल आदि के काव्य में यही क्रांति का स्वर विद्यमान है। सर्वेश्वर की रचनात्मक प्रतिभा इसी क्रांतिकारी परंपरा से जीवंतता पाती है। किसान–मजदूर की पीड़ा, आम आदमी की हिम्मत और शक्ति में विश्वास उन्हें इसी विरासत से मिलता है।

यथार्थ पर विशेष आग्रह रखने की प्रवृत्ति के कारण उन्हें निराला और मुक्तिबोध की परंपरा का कवि कहा जा सकता है तो लोक–भाषा और लोक–संस्कार की पकड़ के कारण उन्हें कबीर, सूर और तुलसी की लोक–परंपरा से जोड़ा जा सकता है। निराला और मुक्तिबोध की विद्रोही परंपरा को उन्होंन काव्य के नए मुहावरे से आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया। यह नया मुहावरा सन् 1960 के बाद की कविता में काफी प्रख्यात हुआ और इसने आगे आने वाले काफी कवियों को प्रभावित किया। मुक्तिबोध के काव्यादर्श उनको चेतना को भीतर तक उद्धेलित करते हैं। 'कवि मुक्तिबोध के निधन पर' नामक उनकी कविता में वे इसे स्वीकार भी करते हैं –

तुम थे –
हम सब के अधिक तेजस रूप
अधिक प्रखर आकृति
तुम्हारा टूटना
हम सब के आकारों का टूटना है।

निराला और केदारनाथ अग्रवाल की कविता की उदात्तता और मैथिलीशरण गुप्त की कविता की स्पष्टता और सादगी दोनो ही उन्हें विरासत में मिली है। किन्तु परम्परा की इस विरासत को ग्रहण करने के साथ सर्वेश्वर नए प्रयोगों में विश्वास रखने वाले कवि है। लीक पर चलने की बजाए वे अपना रास्ता स्वयं बनाने में विश्वास रखते हैं। यही कारण है कि कथ्य, संवेदना, भाषा और शिल्प सभी के स्तर पर वे नए प्रयोग करते हैं और स्वातंत्र्योत्तर कविता में अपना ऐतिहासिक स्थान बनाते हैं। लोक जीवन के नए से नए चित्र उनकी कविता में मिलते हैं। इस संदर्भ में 'सुहागिन का गीत' 'गाँव की शाम का सफर', 'नए साल पर', 'कुआनो नदी', 'भजैनिया का पोखरा', 'बांस गाँव' आदि कविताएँ विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें प्रस्तुत ग्राम्य परिवेश का चित्रण किसी अतिरिक्त मोह के कारण नहीं है, बल्कि वहाँ के अभावों, तकलीफों को उजागर करने के लिए है। गाँव उनके मन में इतना गहरा बैठा है कि कविता में अचानक प्रकट हो जाता है। भारतीय जीवन और समाज का यथार्थ उनकी कविता के माध्यम से उभरकर सामने आता है। इस संवेदना को चित्रित करने का उनका ढंग भी बिल्कुल नया और अपना है। इसीलिए उनकी कविता में व्यंग्य का एक खास पेनापन मिलता है –

मेरे दोस्तो!
तुम मौत को नहीं पहचानते
चाहे वह आदमी की हो
या किसी देश की
चाहे वह समय की हो
या किसी वेश की।
सब कुछ धीरे–धीरे ही होता है
धीरे–धीरे ही बोतलें खाली होती हैं
गिलास भरता है,
हाँ, धीरे–धीरे ही
आत्मा खाली होती जाती है
आदमी मरता है

प्रकृति को आंकते समय भी सर्वेश्वर दयाल नए–से–नए चित्र प्रस्तुत करते हैं। कहीं नए उपमान प्रयोग करते हैं तो कहीं पुराने उपमानों में नए अर्थ भरते हैं। बिबों का नयापन उनकी कविता में हर जगह मिलता है चाहे प्रसंग राजनीति पर व्यंग्य का हो, छद्म बुद्धिजीवियों के ढोंग का। गांधी को सम्बोधित 'पंच धातु' नामक कविता का उदाहरण है –

मैं जानता हूँ
क्या हुआ तुम्हारी लंगोटी का
उत्सवों में अधिकारियों के
बिल्ले बनाने के काम आ गयी

x x x x

और तुम्हारी लाठी?
उसी को टेककर चल रही
एक बिगड़ी दिमाग डगमगाती सत्ता

x x x x

और घड़ी
देश के नब्ज की तरह बंद है।

भाषा और शिल्प के स्तर पर भी उनकी कविता प्रयोगों से भरी पड़ी है। लोक भाषा की शक्ति को उन्होंने पहचाना और उसे संप्रेषण का समर्थ माध्यम बनाया। लोक लयों और लोक छंदों का उन्होंने अपनी कविताओं में सार्थक उपयोग किया है। इतना ही नहीं, अपनी लंबी कविता 'कुआनो नदी' में उन्होंने प्रबंधात्मकता का पुराना ढाँचा तोड़ते हुए नया प्रबंधात्मक शिल्प विकसित किया है।

कथ्य और संवेदना के स्तर पर भी नयापन उनकी कविता में मिलता है। नीचे हम उनकी 'प्रार्थना' नामक कविता से उदाहरण दे रहे हैं। इसमें रचनाकार नयी अभिव्यक्ति संपदा तथा दृष्टि तो खोजता ही है साथ ही अपने दुखते, कसकते, तड़पते अनुभवों को वाणी देता है। पर ऐसा करते समय घुटने नहीं टेकता, समझौता नहीं करता। वह कहता है –

नहीं नहीं प्रभु तुमसे
शक्ति नहीं मागूँगा
अर्जित करूँगा उसे मर कर विखर कर
आज नहीं कल सही आऊँगा उबरकर
कुचल भी गया तो लज्जा किस बात की
रोदूंगा पहाड़ गिरता
शरण नहीं माँगूंगा
नहीं नहीं प्रभु तुमसे
शक्ति नहीं माँगूंगा

ईश्वर के सामने घुटने न टेकने की यह बात दंभ न होकर आत्मविश्वास और मनुष्य की श्रम शक्ति का प्रतीक है। उसमें मध्ययुगीन दैन्य के स्थान पर आत्मबल की दृढ़ता है जो मानवीय

गरिमा की सूचक है। ईश्वर के साथ ही यह 'प्रभु' संबोधन समाज के मठाधीशों और प्रभुत्ता सम्पन्न वर्ग के लिए भी प्रयुक्त है जिनसे कवि न तो समझौता करना चाहता है और न ही उनकी दया पर जीना चाहता है।

### 11.4.6 विचारधारा और प्रभाव

सर्वेश्वर की कविता में राजनीतिक पाखंड, ढोंग और भ्रष्ट व्यवस्था और आज की विसंगतियाँ का चित्रण तो मिलता है किन्तु किसी दल विशेष के मतवाद के प्रति प्रतिबद्धता नहीं मिलती। जाने–अनजाने तौर पर वे राममनोहर लोहिया और जयप्रकाश नारायण की समाजवादी विचारधारा से प्रभावित हैं। वे मानते हैं कि लोहिया के नए क्रांतिकारी विचारों ने युवा–मानस को नए चिंतन की मशाल दी। उनकी कविता 'लोहिया के न रहने पर' इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

विचारधारा के स्तर पर लोहिया से प्रभावित होने पर भी गांधी और मार्क्स दोनों के प्रति उनके मन में प्रबल आकर्षण था। गांधी की निमर्म हत्या और उसके बाद उनके आदर्शों के अनुसरण के नाम पर हो रहे ढोंग के प्रति वे सचेत हैं। उनके राजनीतिक झुकाव उनकी कविता को विचार की ऊर्जा तो प्रदान करते हैं किन्तु उनके सृजन की भीतरी शक्ति नहीं बनते। इसलिए वे कभी किसी विचारधारा विशेष के प्रचारक नहीं बनते। विसंगतियों और विद्रूप के चित्रण की सम्पन्नता के कारण उन पर पश्चिम के अस्तित्ववाद और अनास्थावाद का प्रभाव भी बताया जाता है। किन्तु 'लीक पर वे चलें' तथा 'गर्म हवाएँ' संकलन की 'प्रार्थना 1, 2, 3' आदि कविताएँ या ऐसी अन्य कविताएँ स्पष्ट रूप से सिद्ध करती हैं कि सर्वेश्वर आस्था के कवि हैं। इसलिए सर्वेश्वर को किसी एक विचारधारा का कवि न कह कर प्रगतिशील सामाजिक विचारधाराओं का कवि कहा जाना चाहिए।

जहाँ तक साहित्यकारों के प्रभाव का सवाल है सर्वेश्वर अज्ञेय के काफी निकट रहे। किन्तु उनकी काव्य दृष्टि को स्वीकार नहीं किया। काव्य दृष्टि के लिहाज से वह मुक्तिबोध के ज्यादा निकट हैं। मुक्तिबोध के सृजन कर्म में सर्वेश्वर की आस्था और उनकी राह पर चलने के संकेत हमें उनकी 'मुक्तिबोध के निधन पर' नामक कविता में स्पष्ट देखने को मिलते हैं –

'तुम्हारी मृत्यु में
प्रतिबिंबित है
हम सब की मृत्यु
कवि कहीं अकेला मरता है।

x x x x

तुम्हारे हाथों से जड़े हैं असंख्य हाथ
वे निष्प्राण कैसे हो सकते हैं।
बनी–बनायी लीकों पर न चलने वाले की
यात्रा का अंत
पूर्ण विराम में कहाँ होता है।

x x x x

नहीं नहीं

जीवित हैं हम सब अभी भी
और हम सब में जीवित हो तुम
ये लहरें जाने कहाँ से आती हैं
जो हमारी पसलियों पर
अपने को तोड़ती चली जाती हैं
हमें निरंतर गढ़ती जाती हैं।

### 11.4.7 व्यंग्य वक्रोक्ति की ओर रुझान

समसापयिक यथार्थ की विद्रूपताओं को उभारने के लिए सर्वेश्वर व्यंग्य और वक्रोक्ति को एक औजार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। उनकी ज्यादातर कविताएँ व्यंग्यपरक हैं जिनमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक जीवन की विसंगतियों और विडंबनाओं पर तीखा प्रहार किया गया है। ढोंगी राजनीतिक नेता और नकलची बुद्धिजीवी देव पर व्यंग्य के दो उदाहरण –

(क) घंतमंत दुइ कौड़ी पावा
कौड़ी लै के दिल्ली आवा,
दिल्ली हम का चाकर कीन्ह
दिल दिमाग भूसा भर दीन्ह,
भूसा लै हम शेर बनावा,
ओह से एक दुकान चलावा,
देख दुकान सब किहिन प्रणाम
नेता बनेन कमाएन नाम

(ख) दूसरों के कपड़े पहनकर
सड़क पर मिले एक प्रोफेसर।
बोले :
जिस्म तो अपना है
कपड़े भी अपने हों
क्या जरूरी बात है?
उद्देश्य तो केवल
चाहिए होना आधुनिक
देखिए लगता हूँ न ठीक?

विदेशी विचारधारा को ओढ़कर आधुनिक और क्रांतिकारी कहलाने वाला यह वर्ग अपने भीतर से बिल्कुल खोखला और आत्म–सम्मान विहीन है। वस्तुतः यह बात भारतीय समाज और संस्कृति, विकास की प्रक्रिया और प्रगति सभी क्षेत्रों में इसी प्रकार लागू होती है। धर्म के नाम पर होने वाली बर्बरता और नृशंस हत्याओं पर भी कवि ने ऐसे ही पैने व्यंग्य किए हैं 'दंगों के बाद' नामक कविता से एक उदाहरण है –

ऐसा क्यों होता है?
कि धर्मग्रंथ छूकर भी
किसी आदमी के हाथ
जंगली जानवर के पंजे में बदल जाते हैं

जहरीले नाखून से वह
इंसान की सूरत नोचने लगता है,
और ईश्वर का नाम लेते ही
जीभ लपलपाने लगती है।

x x x x

मंत्रों और आयतों की जगह
दहाड़ सुनाई देती है

**(वहशी दहाड़)**

इन व्यंग्यों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें बात सहजता या कोमलता से कहने की बजाए धारदार ढंग से कही गयी है। सर्वेश्वर अपने इस लहजे के प्रति पूर्ण सचेत हैं। 'तीसरा सप्तक' के कवि वक्तव्य में उन्होंने कहा भी है – 'जब चारों ओर लोग इस बात पर कमर बाँधे हों कि वे आपकी बात नहीं समझेंगे तब आपके सामने दो ही रास्ते रह जाते हैं, या तो चुप रहें, अपनी बात न कहें या फिर उसे इस ढंग से कहें कि सुनने वाला तिलमिला उठे, उसकी कलई उतर जाय।' यही कारण है कि आम आदमी का दुख दर्द भी उनकी कविता में तीखे व्यंग्य के माध्यम से उभर कर आता है 'भुजैनियों का पोखरा' कविता से एक उदाहरण है –

भाड़ के सामने काली भूतनी–सी
आज भी वह बैठी है
पसीने से चिपचिपाती देह लिए
चुप खामोश,
एक–एक चने से अपना भाग्य जोड़ती
दुखती रगें तोड़ती
उसके अधनंगे बच्चे
भाड़ झोंकने के लिए
दिन भर सूखी पत्तियाँ बटोरते हैं
और शाम को मक्के की रोटी
और नरई का साग अगोरते हैं।

## 11.4.8 प्रकृति और जीवन दृष्टि

नयी कविता में प्रकृति की प्रस्तुति का स्वरूप बदला। छायावादी युग में प्रकृति को जिस कल्पनातिरेक और भावमय संसार के रूप में प्रस्तुत किया गया था उसे नयी कविता ने स्वीकार नहीं किया। नयी कविता के कवियों ने इसे आम आदमी की जागरूक संवेदना–शक्ति के साथ जिया और व्यक्त किया है। विशेष रूप से सर्वेश्वर की कविता में यह आम जीवन का जिया–भोगा प्रकृति का रूप ही अपनी भरपूर संप्रेष्यता के साथ व्यक्त हुआ है। इसलिए यहाँ प्रकृ ति किसी सुदूर कुतूहलपूर्ण रहस्यमयी सत्ता का नाम नहीं बल्कि दिनों–दिन जीवन में हमारे साथ चल रही वास्तविक स्थितियाँ और छवियाँ हैं। 'नये साल पर' कविता में कवि कहता है –

खेतों की मेड़ों पर
धूल भरे पाँव को

कुहरे में लिपटे उस छोटे से गाँव को
नये साल की शुभ कामनाएँ।

प्रकृति के विभिन्न उपादानों को भी एक विशेष गति, थिरकन और लय के साथ प्रस्तुत किया गया है–

वक्ष खोले डोलती अमराइयाँ
गर्व से आकाश थामे खड़े
ताड़ के ये पेड़,
हिलती क्षितिज की झालरें,
झूमती हर डाल पर बैठी,
फलों से मारती
खिलखिलाती शोख अल्हड़ हवा,
गायक–मंडली से थिरकते आते गनन में मेघ,
वाद्य यंत्रों से पड़े टीले।

यहाँ बनने वाले बिंबों में एक तरह का जाना–पहचानापन या निकटता का बोध होता है। दूसरी ओर प्रकृति के उन रूपों को भी अपने वास्तवपन में प्रस्तुत किया गया है जो मानवीय मन को सहलाते, गुदगुदाते नहीं बल्कि आम आदमी के लिए तबाही खड़ी कर देते हैं। 'कुआनो नदी' से कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं –

फिर बाढ़ आ गई होगी उस नदी में
पास का फुटहिया बाजार बह गया होगा
पेड़ की शाखाओं पर बँधे खटोले पर
बैठे होंगे बच्चे किसी काछी के
और नीचे कीचड़ में खड़ें होंगे चौपाए
पूंछ से मक्खियाँ उड़ाते।

**(कुआनो नदी)**

व्यंग्य–वक्रोक्ति के लिए प्रकृति का प्रतीकात्मक उपयोग बड़ी ही सुघड़ता और सफलता के साथ किया गया है।

(1) पानी चढ़ रहा है
खून खौल रहा है,
बहुत करीब आ गया है ?
खतरे का निशान

**(कुआनो नदी)**

(2) चट्टानों पर सो रहा है काला तेंदुआ
चट्टानों का रंग काला है
चट्टानों पर अंगड़ाई ले रहा है

काला तेंदुआ
चट्टानों का रंग बदल रहा है
x x x x

चट्टानों पर झिंझोड़ रहा है अपना शिकार
काला तेंदुआ
चट्टानें, चट्टानें नहीं रहीं
तेंदुआ में बदल गई हैं।
एक तेंदुआ
सारे जंगल को
काले तेंदुआ में बदल रहा है।

**(जंगल का दर्द)**

छायावादी कवि अपने व्यक्तित्व को सीधा प्रकट न करके उसे प्रकृति की रहस्यात्मक कुहेलिका के माध्यम से अभिव्यक्त करते थे। वे प्रकृति को ही सब कुछ मानते थे, उसी से सृजन प्रेरणा पाते थे। नयी कविता में यह दृष्टिकोण बदला। कवि ने प्रकृति से प्रेरणा तो पायी है किन्तु अपने कवि–व्यक्तित्व को समर्पित करके नहीं। प्रकृति के प्रति यह बदला हुआ दृष्टिकोण वस्तुतः जीवन–दृष्टि के बदलाव का परिणाम है। परंपरा स्वीकृत सोच पर प्रश्न चिह्न लगाने का परिणाम ही है कि सर्वेश्वर डार्विन के विकासवाद के सिद्धांत पर प्रश्न चिह्न लगाते हैं जिसके अनुसार बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती है –

ताकतवर ने सब खा लिया
कमजोर ने उच्छिष्ट से
संतोष कर, दर्द से मुँह छिपा लिया।

कवि इसी क्रम को तोड़ना चाहता है कि ताकतवर ही 'सब कुछ' खाता रहे। वह इस व्यवस्था को बदल कर नई व्यवस्था कायम करना चाहता है जिसमे गैर–बराबरी या छोटे–बड़े का फर्क कम हो सके। कवि व्यक्तिवादी भावों की बलि नहीं देता। कविता में परिवर्तनकारी नए विचारों की मशाल जलाता है। इसीलिए वह उत्पीड़ित जन सामान्य को क्रांति के लिए प्रोत्साहित करता है –

(1) 'ऐसी कोई जगह नहीं
जहाँ तुम पहुँच न सको
ऐसा कोई नहीं
जो तुम्हें रोक ले।'

(2) विपत्ति में
तुम अकेले नहीं हो
असंख्य सोते कुलबुलाते हैं
चट्टानों में
मिलकर धारा बनने को

इसे पहचानो
राह निकलेगी निश्चय।

**बोध प्रश्न –2**

1. 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए।

i) सर्वेश्वर की कविता ग्रामीण संवेदना की कविता है। हाँ/नहीं

ii) उन्होंने विशिष्ट व्यक्तियों को ही अपने काव्य का विषय बनाया है। हाँ/नही

iii) उनकी कविता में गाँवों की प्रगति और खुशहाली के चित्र हैं। हाँ/नही

iv) उनकी कविता में मोहभंग से उत्पन्न अवसाद, पीड़ा और घुटन के चित्र मिलते हैं। हाँ/नही

v) उन्होंने सत्ता के यशोगान की कविता लिखी है। हाँ/नही

**बोध प्रश्न –3**

1. सर्वेश्वर की कविता के केन्द्र में निम्नलिखित में से कौन है?
   क) बुद्धिजीवी
   ख) राष्ट्रीय नेता
   ग) आम आदमी
   घ) साहित्यकार वर्ग

2. उनकी कविता का स्वर –
   क) क्रांति की चेतना का है
   ख) समझौते का है
   ग) शांति की स्थापना का है

3. वे अपनी कविता में किस–किस स्तर पर नए प्रयोग करते हैं?

**बोध प्रश्न –4**

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।**

1. सर्वेश्वर पर किन राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव माना जाता है?

.....
.....
.....
.....

2. सर्वेश्वर के व्यंग्य की दो विशेषताएँ बताइए।

.....
.....
.....
.....

3. प्रकृति के प्रति सर्वेश्वर के दृष्टिकोण की दो विशेषताएँ बताइए।

.....

.....

.....

.....

## 11.5 अभिव्यंजना शिल्प

### 11.5.1 काव्य रूप

सर्वेश्वर ने प्रमुख रूप से मुक्तक कविताएँ ही लिखी हैं। उनके काव्य–संकलनों की अधिकांश कविताएँ सीमित आकार की और अपने आप में पूर्ण हैं। लोक गीतों की तर्जपर भी उन्होंने कुछ कविताएँ लिखी हैं जैसे– 'झाड़ै रो महकुआ', 'गरीबा का गीत' आदि। तुकांत होने के साथ ही इन कविताओं में गेयता है। 'कुआनो नदी' का काव्य रूप उनकी अन्य कविताओं से भिन्न है। यह एक लंबी कविता है। लंबी कविता आधुनिक हिंदी काव्य का विशिष्ट काव्य रूप है। छायावाद युग में प्रसाद की 'प्रलय की छाया', पंत की 'परिवर्तन', निराला की 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' आदि लंबी कविताएँ लिखी गई हैं। नयी कविता के दौर में अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', मुक्तिबोध की 'अंधेरे में', नरेश मेहता की 'समय देवता', सर्वेश्वर की 'कुआनो नदी' आदि लंबी कविताएँ लिखी गईं। ये कविताएँ केवल अपने आकार के लिए ही विशिष्ट नहीं है बल्कि शिल्पगत और विचारगत विशिष्टिता के कारण लंबी कविता को एक पृथक काव्यरूप माना गया है। हालाँकि छायावादी युग और नयी कविता युग की लंबी कविताओं का रचना विधान आयाम में पर्याप्त भिन्न है। एक बात निश्चित है कि लंबी कविता का अपना प्रबंधात्मक शिल्प होता है इस शिल्प का विधान परंपरागत प्रबंधात्मकता के पालन के लिए बाध्य नहीं होता। रचनाकार इसे अपनी जरूरत के अनुरूप गढ़ता है। सर्वेश्वर ने कुआनो नदी में पुराने प्रबंध शिल्प को छोड़ते हुए चिंतनात्मक प्रबंध शिल्प को अपनाया है। कविता तीन खंडों में रखी गई है– (1) कुआनो नदी, (2) कुआनो नदी के पार, (3) कुआनो नदी–खतरे का निशान। तीसरे खंड तक आते–आते कविता फैंटेसी, व्यंग्य–कथा, आत्म–कथन आदि कई शैलियों में आ जाती है। कविता में एक तरह का नाटकीय मोड़ आता है। नदी का पानी चढ़ना जन–क्रांति का प्रतीक बन जाता है।

### 11.5.2 काव्य–भाषा

कवि की संवेदना की संपूर्ण वाहक उसकी काव्य–भाषा होती है। उसके अनुभवों, भावों और विचारों को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है। इसीलिए काव्य–भाषा किसी भी कवि की संपूर्ण रचना प्रक्रिया को जानने का सर्वाधिक प्रामाणिक माध्यम होती है। नयी कविता जीवन के व्यापक संदर्भो को उजागर करने के लिए अपनी पूरी शक्ति के साथ सक्रिय रही है और यह कार्य उसने काव्य–भाषा के माध्यम से काफी हद तक किया है। सर्वेश्वर का रचना कर्म नयी कविता के समस्त काल में विस्तार तक फैला है और उसे दिशा देने में भी समर्थ हुआ है। अतः सर्वेश्वर की कविता का मुहावरा जानना नयी कविता के मुहावरे को समझने के लिए जरूरी है।

सर्वेश्वर ने परंपरागत काव्य–भाषा को स्वीकार नहीं किया क्योंकि वह उन्हें जन–जीवन के पर्याय की अनुभूतियों को वहन करने में समर्थ नहीं प्रतीत हुई। भाषा के पांडित्य या ऊपरी सजधज का बहिष्कार करते हुए उन्होंने आम बोलचाल की भाषा को अपनी काव्य–भाषा के रूप में अपनाया।

उनकी काव्य–भाषा शब्द, पदबंध और वाक्य विन्यास की जटिलता को दूर रखते हुए नित्यप्रति की जीती–जागती शब्दावली, लोक–लयों और लोक मुहावरों का जीवंत संसार बन गई। खेत–खलिहान, गली–मोहल्ले, चूल्हे–चौपाल से आयी यह भाषा सर्वेश्वर की कविता की मूल संवेदना–ग्रामीण संवेदना की प्रामाणिकता की पहचान है। लोक जीवन और लोकचित्त से उनका जुड़ाव उनकी भाषा में प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त है। 'काठ की घंटियाँ' की आरंभिक कविताओं की भाषा पर जो भावुकता और रोमानीपन का दबाव था वह भी धीरे–धीरे भावों और विचारों की आँच में पक कर लोक संवेदना में बदलता गया है। आम आदमी के व्यक्तित्व और अस्तित्व को रोजमर्रा की जानी पहचानी अनुभूतियों और बिंबों के माध्यम से व्यक्त करती हुई उनकी भाषा में खीझ–रीझ, पीड़ा अवसाद और आंतरिक संघर्ष को तसल्ली तो मिलेगी किन्तु चमत्कार या शास्त्रीयता का कोई दबाव नहीं मिलेगा। इस दिशा में उनका दृष्टिकोण भवानी प्रसाद मिश्र से मिलता दिखाई देता है। भवानी प्रसाद मिश्र का कहना था –

जिस तरह हम बोलते हैं
उस तरह तू लिख
और उसके बाद भी
हमसे बड़ा तू दिख

यहाँ हम से बड़ा दिखने की बात का अर्थ है भाषा में अर्थ की गहनता होना, व्यंजनात्मकता होना। बालचाल की भाषा को जब कवि काव्य–भाषा के रूप में अपनाता है तो इसका मतलब यह नहीं होता कि वह 'सपाट बयानी' करता है। बल्कि इसका मतलब यह होता है कि बोलचाल की भाषा को स्पष्टता और सरलता तो कविता में होती ही है साथ ही उसमें अर्थ की विशिष्ट गहनता और व्यापकता भी होती है। उदाहरण के लिए इस इकाई में आगे आप एक कविता पढ़ रहे हैं –'धीरे–धीरे'। इस कविता में जीवन मूल्यों के विघटन की बात बड़ी ही सरल सहज किंतु व्यंजनाश्रित भाषा में कह दी गई है। इसी तरह का एक अन्य उदाहरण है –

कुछ इतना बड़ा न हो
जो मुझ से खड़ा न हो
सामने पहाड़ हो
लेकिन अड़ा न हो

**('गर्म हवाएँ' प्रार्थना–3)**

भाषा को वे कवि कर्म की ईमानदारी का प्रतीक और कवि संवेदना की पहचान या स्वरूप मानते हैं। 'छीनते आए है वे' नामक कविता में वे लिखते हैं –

एक गलत भाषा में
गलत बयान देने से
मर जाना बेहतर है
यही हमारी टेक है
और अब छीनने आए हैं वे
हम से – हमारी भाषा
यानी हम से हमारा रूप

जिसे हमारी भाषा ने गढ़ा है।

सर्वेश्वर की काव्य–भाषा में खड़ी बोली, अवधी और उर्दू का अच्छा मेल तो है ही आजकल की बोलचाल की भाषा की अंग्रेजी मिश्रित शब्दावली और उपमाएँ भी मौजूद हैं –

तुम
जिसके बालों में बनावटी कर्ल नहीं
जिसकी आँखों में न गहरी चटक शोखी है
थर्मामीटर के पारे से
चुपचाप जिसमें भावनाएँ चढ़ती–उतरती हैं
x x x x

आपरेशन थियेटर सी
जो हर काम करते हुए चुप है'

**(तुम कहो)**

भाषा की शक्ति को समझते हुए उसे सर्वेश्वर ने वैचारिक और रचनात्मक दोनों स्तरों पर सृजित किया।

### 11.5.3 बिंब और प्रतीक

सर्वेश्वर की काव्य–भाषा बिंब प्रधान काव्य–भाषा है। किंतु कविता में बिंबों को बहुतायत के कारण उन्हें रूपवादी कवि नहीं मान लिया जाना चाहिए। उनकी कविता में प्रतीकों और बिंबों की बहुतायत का कारण यह है कि नए अनुभवों और विचारों को पुराने प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से कह पाना असंभव होता है। अतः बिंब उनकी कविता में चमत्कार की सृष्टि अथवा फैशन के लिए नहीं आए हैं बल्कि उसकी आंतरिक जरूरत के रूप में आए हैं। सामाजिक यथार्थ की विसंगतियों को प्रगट करने के लिए कवि ने भाषा का जो व्यंजनाश्रित और व्यंग्यात्मक प्रयोग किया है और ये बिंब सहज ही बन पड़े हैं। सामंती अत्याचार में भूख से पीड़ित दलित वर्ग का सहज चित्र इन पंक्तियों में है –

'एक ओर भूखी गौरेय्या
एक ओर नीला अजगर'

विभिन्न प्रकार के जीवनानुभवों से कवि यथार्थ को प्रस्तुत करता है और बिंब इसी पुनर्रचना की प्रक्रिया प्रधान अंग हैं। बिंब की यह प्रक्रिया भाषा की समूची प्रक्रिया में स्थान पा जाती है। प्रतीक और बिंब काव्य–भाषा की सृजनात्मक प्रक्रिया के अनिवार्य किंतु विशिष्ट तत्व होते हैं। सूक्ष्म अर्थ–छायाओं को बिंब में ढालने के लिए कवि अपने कुछ प्रतीक निर्धारित करता है। ये प्रतीक परंपरा स्वीकृत भी हो सकते हैं और कवि द्वारा निर्मित भी। नए प्रतीक भाषा में नयी अर्थवत्ता का संचार करते हैं। सर्वेश्वर की कविता में भेड़िया, तेंदुआ, गुबरैला, अजगर, साँप, बंदूक, संदूक, लालटेन, आदि बहु प्रयुक्त प्रतीक हैं। उनके अधिकांश प्रतीक प्रकृति और ग्रामीण

जीवन से आए हैं। शहरी जीवन के प्रतीकों का भी बहिष्कार नहीं है। जहाँ भी व्यंग्य–वक्रोक्ति के लिए जरूरत हुई है उनका खुल कर प्रयोग हुआ है।

नए प्रतीकों को सर्वेश्वर ने एक समृद्ध बिंब प्रक्रिया में रूपांतरित किया है। उनके अधिकांश बिंब काव्य–वक्रोक्ति के रूप में प्रकट हुए हैं और अपने प्रभाव की मार में काफी असरदार हैं जैसे आयात स्थिति पर अप्रत्यक्ष व्यंग्य के दो उदाहरण हैं –

(1) एक तेंदुआ
सारे जंगल को
काले तेंदुए में बदल रहा है

(2) अब मैं कवि नहीं
एक काला झंडा हूँ
तिरपन करोड़ भौहों के बीच मातम में
खड़ी है मेरी कविता

'चुपाई मारौ दुलहिन' नामक कविता में गरीब औरत के चित्र के माध्यम से प्रस्तुत सामाजिक व्यभिचार का, व्यवस्था के चरित्र की तस्वीर कवि की सफल बिंब सृष्टि की परिचायक है –

लाला के बाजार में
मिली दुअन्नी
पर वह भी निकली खोटी
दिन भर सोई
बीच बाजार में बैठ के रोई
साँझ को लौटी
ले खाली झौआ

इसी तरह 'धीरे–धीरे' नामक कविता में गिलास और बोतल के प्रतीकों के माध्यम से राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक मूल्यों के विघटन के बिंब बड़े ही कौशल के साथ प्रस्तुत किए गए हैं।

प्रकृति के साहचर्य के बिंबों में सर्वेश्वर की कविता में एक खास तरह की ताजगी मिलती है। तकलीफों की भीषण मार प्रकृति के परंपरागत प्रतीकों को भी नए रूप में रखने को प्रेरित करती है। वसंत और फूलों से लदी डालियाँ मात्र सुख ही नहीं प्रदान करतीं–

फूलों की भरी डाल
जिसको था पकड़ इतराता
फूल गिरी मुझ पर अजगर सी
ठंडी एक लपेट ने
मुझे आज फिर कसा
फिर वसंत ने मुझे डसा

लेकिन जहाँ कवि प्रकृति के सौंदर्य को आँकता है वहाँ बिंबों की एक खास तरह की ताजगी प्रस्तुत होती है–

आकाश का साफा बाँधकर
सूरज की चिलम खींचता
बैठा है पहाड़
घुटनों पर पड़ी है नदी चादर सी

बिंबों का यह नयापन छायावादी या प्रयोगवादी कविता के प्राकृतिक दृश्यों से बिल्कुल अलग अपनी छवि प्रस्तुत करता है। प्रतीकों के नए उपयोग और बिंबों की बहुतायत के बावजूद ध्यान रखने की बात है कि कवि उन्हें कभी सजावट के सामान या कौतुहल सृष्टि के औजार के रूप में इस्तेमाल नहीं करता क्योंकि उसका प्रमुख उद्देश्य संप्रेषणीय भाषा में कविता लिखना है। यह बात कविताएँ तो स्पष्ट करती ही हैं, स्वयं कवि भी इस ओर सचेत है। इसका प्रमाण निम्नलिखित पंक्तियाँ है –

बिंब और प्रतीक को
मारिए गोली
बोलिए मेरे साथ
खड़ी फर्रुखाबादी बोली

**(गर्म हवाएँ)**

### 11.5.4 नवीन उपमान योजना

सर्वेश्वर के काव्य का सर्वाधिक समृद्ध पक्ष है उनकी नूतन उपमान योजना। इस उपमान योजना ने कवि की दृष्टिगत नवीनता को उजागर करने की एक पद्धति ही विकसित कर ली है। छायावाद का कवि अमूर्त उपमानों से काम चला लेता था। लेकिन परंपरागत उपमान प्रणाली उसे पसंद न थी। प्रगतिवाद और प्रयोगवाद में भाव को स्पष्ट करने के लिए मूर्त उपमानों की ओर झुकाव बढ़ा। इस झुकाव के मूल में जटिल यथार्थ के संप्रेषण की समस्या भी थी। सर्वेश्वर ने आरंभ में ही विषयवस्तु के स्तर पर बदलती हुई काव्य भूमि को नवीन संवेदना से ग्रहण किया। उसी के भीतर से नवीन उपमानों और बिंबों को वे रचने लगे। प्राकृतिक परिवेश और परिचित वस्तुओं के प्रति भी उनका दृष्टिकोण बदल गया और वे नयी कविता के काव्य मुहावरे में काव्य–बिंब और काव्य–मूल्य के स्तर पर संघर्ष करने लगे। सर्वेश्वर ने अनुभव किया कि परंपरागत उपमान निरंतर प्रयोग के कारण इतने घिस गए हैं कि नयी अर्थ दीप्ति उनसे पैदा नहीं की जा सकती। फलतः नवीन सौंदर्य चेतना के अनुरूप नए उपमानों की खोज की। इस खोज का उनकी उपमान योजना में विशेष महत्त्व है। एक उदाहरण है –

मन मेरा
स्मृति के कब्जे पर
कसे हुए खिड़की के पल्ले सा
खुलता, बंद होता रहा,
छड़ और दीवार के बीच
सिर पटकता रोता रहा।

'रात भर' शीर्षक इस कविता में कवि ने अमूर्त दर्द को मूर्त स्थिति और उपमान से संप्रेषित किया है। अर्थ व्यापार अधिक प्रभावी इसलिए है कि खिड़की के खुलने और बंद होने में एक मानवीय हलचल है जिसे वह सिर पटकता रहा के संकेतों से व्यक्त करता है। 'स्मृति के कब्ज़े पर कसा हुआ खिड़की के पल्ले सा' एक ऐसा उपमान है जो इससे पूर्व हिंदी कविता में नहीं मिलता। सर्वेश्वर मनोरोगों, मनःस्थितियों, आघातों और तनावों के लिए जिन नई स्थितियों को सामने लाते हैं उनमें कई बार विद्रूप उपमान भी होते हैं जैसे –

मैं तुम्हारे पीले होठों की
दम तोड़ती हुई गर्मी का कफन ओढ़कर
सदा के लिए सो सकता हूँ।

**(एक प्यासी आत्मा का गीत)**

'पीले ओठ', 'दम तोड़ती गर्मी' और उनमें 'कफन ओढ़कर सोने की प्रक्रिया' विरोधाभास की स्थिति का सीधा उपमान है। ओठों का ठंडापन और हरकत रहित स्थिति की विडंबना का उपमान कफन के अतिरिक्त हो भी क्या सकता है। सर्वेश्वर ऐसी ही स्थितियों के लिए कल्पना को तार्किक ढंग से सक्रिय भी करते हैं उनकी प्रसिद्ध काव्य–पंक्तियों की उपमान योजना दृष्टव्य है –

जिंदगी मरा हुआ चूहा नहीं है
जिसे मुख में दबाए
बिल्ली की तरह हर शाम गुजर जाए
और मुंडेर पर कुछ खून के दाग छोड़ जाए।

**(यह खिड़की)**

जिन्दगी की विशालता और निरंतरता को कवि व्यंजना के संकेत से सामने लाता है। मरा हुआ चूहा जिंदगी का पर्याय नहीं हो सकता और न शाम चूहे को बिल्ली की तरह मुँह में दबाए गुजर सकती है। तर्क यह है कि जिंदगी अपनी मूल गति में इतिहास चक्र को रचती है। इसलिए बिल्ली की तरह शाम का उपमान पूरी स्थिति की विडंबना पर व्यंग्य करता है। इस उपमान से नया बिंब सामने आया है। इस विचार शृंखला का सारांश यह है कि सर्वेश्वर के बिंब विधान में ताजगी और नवीनता नवीन उपमानों ने पैदा की है। इतना ही नहीं इन नवीन उपमानों में उनके काव्य–शिल्प का, काव्य–भाषा की सर्जनात्मकता का विकास किया है। इन उपमानों में बुद्धि का चमत्कार कम आधुनिक वैचारिक युग की प्रेरणा अधिक है। नयी कविता में कल्पना का जिस ढंग से बदलाव हुआ सर्वेश्वर की उपमान योजना उसी का साक्ष्य प्रस्तुत करती है।

### 11.5.5 छंद और लय

लीक को छोड़कर अनिर्मित पंथ पर चलने वाले कवि सर्वेश्वर कविता में छंद को लेकर भी काफी प्रयोगधर्मी हैं। यों तो छायावाद के जमाने से 'छंद के बंध' खुल गए थे, फिर भी कविता में पुराने अनुशासन को न मानते हुए भी छंद का नया अनुशासन स्थापित किया गया था। प्रयोगवाद और नयी कविता के कवियों के इस दिशा में और भी छूट ली।

शब्द की लय के स्थान पर अर्थ की लय पर जोर दिया जाने लगा। कविता तुकांत हो अथवा अतुकांत यह महत्वपूर्ण नहीं था। महत्वपूर्ण यह माना गया कि उसमें अर्थ की कितनी गहनता और व्यापकता है। यह जरूरी नहीं था कि कानों को बहुत मधुर लगे। जरूरी यह था कि वह अपने अर्थ को संप्रेषणीय बनाए और पाठक पर वांछित प्रभाव डाले।

उसकी संवेदना को तीर की तरह चीरता गुजर जाए। सर्वेश्वर की कविता में छंदों का पारंपरिक ढाँचा नहीं अपनाया गया है। गद्य की आवेग सर्जित लय को अपनाता हुआ कवि अर्थ की लय से कविता में नाद–सौंदर्य पैदा करता है। मुक्त छंद के प्रयोग में सर्वेश्वर निराला की परंपरा में दिखाई देते हैं। ग्रामीण संवेदना और लोक भाषा के साथ उनकी कविता में लोक छंदों और लोक लयों का भी समावेश हुआ है। लोक गीतों की तर्ज पर उन्होंने 'सुहागिन का गीत' 'गरीबा का गीत'। 'झाड़ै रौ महकुआ', 'चरवाहों का युगल गीत' आदि कविताएँ लिखी हैं।

**बोध प्रश्न–5**
**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।**

1. 'कुआनो नदी' का काव्य रूप क्या है?
   .....
   .....
   .....
   .....

2. नीचे दिए गए कथनों पर सही (√) या गलत (X) का निशान लगाएँ।
   सर्वेश्वर की काव्य भाषा –
   क) दुरुह है।
   ख) बोलचाल की है।
   ग) व्यंग्यात्मक है।
   घ) बिंब प्रधान है।
   ङ) अस्पष्ट है।
   च) पंडिताऊ है।
   छ) लोक भाषा है।

3. उनकी काव्य–भाषा में किन बोलियों और भाषाओं का मेल है?
   .....
   .....
   .....
   .....

4. सर्वेश्वर द्वारा बहु–प्रयुक्त चार प्रतीक बताइए।
   .....
   .....

.....

.....

5. 'धीरे–धीरे' नामक कविता में किन चीजों को प्रतीक के रूप में लिया गया है?

.....

.....

.....

.....

6. सर्वेश्वर के छंद विधान में उनकी ग्रामीण संवेदना किस तरह प्रकट हुई है?

.....

.....

.....

.....

## 11.6 सारांश

सन् 1960 के बाद की हिंदी कविता में सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का नाम कई दृष्टियों से बहुत ही महत्वपूर्ण है। हिंदी कविता को भारतीय जीवन और समाज के यथार्थ और ज्वलंत समस्याओं से जोड़ने का काम यों तो भारतेंदु युग से ही शुरू हो गया था और हर युग के रचनाकार इसे अपनी विशिष्ट क्षमताओं और प्रवृत्तियों के अनुरूप एक महत्वपूर्ण दायित्व के रूप में निभाते आ रहे थे। फिर भी, चालीस के दशक और उसके बाद की कविता पर विदेशी प्रभाव और अनुकरण का आरोप लगाया जाने लगा था। सर्वेश्वर ने हिंदी कविता में निराला और मुक्तिबोध की परंपरा को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। कविता को आम आदमी – किसान–मजदूर की पीड़ा से जोड़ते हुए उसके लिए जिम्मेदार व्यवस्था पर कटु–तिक्त व्यंग्य किए। काव्य बिंबों की सामाजिकता, भाषा की लोक संवेदना, व्यंजनाधर्मी प्रतीक विधान, बिंब विधान की नवीनता, लोक छंदों और लयों की स्वीकृति के माध्यम से उन्होंने नयी कविता में सशक्त व्यंग्य काव्य की सृष्टि की, जो अपने आप में तो पर्याप्त महत्वपूर्ण है ही इस दृष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण है कि इसने समसामयिक और अगली पीढ़ी के हिंदी कवियों को तेजी से प्रभावित किया। धुमिल, मलयज, लीलाधर जगूड़ी आदि समकालीन कवियों पर सर्वेश्वर का प्रभाव काव्य और शिल्प दोनों स्तर पर काफी स्पष्ट और गहरा है।

समसामयिक कविता पर उनकी कविता के प्रभाव का साक्ष्य देते हुए डॉ. जगदीश गुप्त ने लिखा है – 'सर्वेश्वर उन कवियों में सर्वप्रमुख हैं जिनकी कविताओं ने छठे दशक के आरंभ में ही मुझे 'नयी कविता' की शक्ति–सामर्थ्य के प्रति गहराई से आश्वस्त किया था। जो विश्वास आधुनिक युग–बोध से युक्त उनकी सच्ची और मार्मिक अभिव्यक्ति ने मुझे उस समय और बाद में दिया, उसके सहारे मैंने निर्भीक हो कर नयी कविता की लड़ाई लड़ी जिसका फल भला–बुरा जैसा भी माना जाए सामने है। x x x इस दृष्टि से सर्वेश्वर के कृतित्व का नयी हिंदी कविता के संदर्भ में ऐतिहासिक महत्व माना जाएगा, इसमें संदेह नहीं।' (नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ, पृ. 271)

उनके सृजन कर्म ने सन् 1960 के बाद की हिंदी कविता को नया काव्य मुहावरा दिया है। नयी कविता को विलायती नकल मात्र कहकर खारिज कर देने वालों की बात सर्वेश्वर की कविता ने बेमाने सिद्ध कर दी। उनकी काव्य–संवेदना को नयी कविता के विरोधियों के विरुद्ध अस्त्र के रूप में खड़ा किया गया।

सर्वेश्वर में परिवेशगत सजगता अपने समकालीन कवियों से अधिक है, ढोंग और अविश्वास को वे पहचानते हैं और वैविध्यमयी प्रतीकों द्वारा व्यक्त करते हैं। स्थिति की अराजकता और बेढंगा सत्तावाद 'जंगल का दर्द' बन जाता है तो 'कुआनो नदी' का मुर्दाघाट–पाट दिल्ली की सड़कों तक फैला दिखाई देता है। वे स्थिति के बदलाव के लिए तुरंत प्रयास करने की प्रेरणा देते हैं। उनके चिंतन पर लोहिया का प्रभाव है – इसी से वे 'इंतजार' और 'धीरे–धीरे' जैसे शब्दों से 'सख्त–नफरत' करते हैं। उनके आरंभिक काव्य में अज्ञेय और धर्मवीर भारती जैसा रोमानी भाव–बोध मिलता है किंतु जीवन जगत की विषमताओं की टकराहट जल्दी ही इसे चूर कर देती है और यथार्थ का दबाव प्रबल हो जाता है। सर्वेश्वर के काव्य पर विचार करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है –'बच्चे जिस तरह सपने देखते हैं, यथार्थ संसार को जिस तरह सपने में मिला देते हैं, वैसे ही कल्पना सर्वेश्वर दयाल की अनेक कविताओं में है। यह यथार्थ को मोहक आवरण से ढकने वाली कल्पना नहीं है, यथार्थ से खेलने वाली, उसे सर के बल उलट कर देखने वाली, काव्य के लिए सार्थक कल्पना है।' (नयी कविता और अस्तित्ववाद, पृ. 68)

## 11.7 शब्दावली

**विद्रूपता** : भोंडा, बेढंगा।
**आत्म–निर्वासन** : पश्चिम के 'alienation' शब्द का अनुवाद श्रम के पराएपन से प्रायः आत्म–निर्वासन पैदा होता है। आत्म–निर्वासन व्यक्ति को भीतर से तोड़ देने वाला अकेलापन है जो ऊब और त्रास को जन्म देता है।
**भदेस** : भोंडा, बेढंगा।
**अर्थच्छाया** : काव्यशास्त्र में उसे व्यंजना शब्द शक्ति कहा जाता है। इसका अर्थ है अनेकार्थता।
**श्रम का परायापन** : मार्क्सवादी चिंतन का शब्द। पूंजीवादी व्यवस्था का एक दुखद पहलू कि इस व्यवस्था में श्रमिक जो श्रम करता है उसका लाभ मालिक को मिलता है। जब श्रमिक में यह भावना पैदा हो जाती है तो यह परायापन या तो विद्रोह में फूटता है या आत्महंता स्थिति अपनाता है।

## 11.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

**अभ्यास 1**
देखें भाग 11.2

**बोध प्रश्न 1**
1) तीसरा सप्तक
2) काठ की घंटियाँ

3) उपन्यास, नाटक, बाल साहित्य, पत्रकारिता
4) खूटियों पर टंगे लोग

**बोध प्रश्न 2**

i) हाँ ii) नहीं iii) नहीं iv) हाँ v) नहीं

**बोध प्रश्न 3**

i) ग ii) क

iii) निराला, मुक्तिबोध, माखनलाल चतुर्वेदी, केदारनाथ अग्रवाल, कथ्य, भाषा, छंद, बिंब आदि।

**बोध प्रश्न 4**

1. लोहिया की समाजवादी विचारधारा, गांधीवाद और मार्क्सवाद
2. i) सामाजिक–राजनीतिक व्यंग्य है।
   ii) व्यंग्य बहुत तीखे और चुभने वाले हैं।
3. i) प्रकृति के प्रति पारंपरिक दृष्टिकोण रखने की बजाए उसे दैनिक जीवन के संदर्भ में देखते हैं।
   ii) प्रकृति के नए और जीवंत बिंब प्रस्तुत करते हैं।

**बोध प्रश्न 5**

1. लंबी कविता
2. क) x ख) √ ग) √ घ) √ ङ) x च) x छ) √
3. खड़ी बोली, अवधी और उर्दू
4. तेंदुआ, गुबरैला, बंदूक, साँप
5. बोतल, गिलास और मौत
6. लोक लयों और लोक गीतों की तर्ज में।

## 11.9 उपयोगी पुस्तकें

डॉ. जगदीश गुप्त :**नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ**, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली। डॉ. विश्वनाथ **प्रसाद तिवारी** :**समकालीन हिंदी कविता,** राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल :**सर्वेश्वर और उनकी कविता**, लिपि प्रकाशन, दिल्ली।
श्री गिरिजा कुमार माथुर :**नयी कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ**, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।